DAILY NEWS BULLETIN

LEADING HEALTH, POPULATION AND FAMILY WELFARE STORIES OF THE DAY

Thursday 20211007

कोरोना

देश में पिछले 24 घंटों में आए कोरोना के 22 हजार नए मामले, 318 लोगों की मौत (Dainik Jagran: 20211007)

https://www.jagran.com/news/national-coronavirus-india-update-22-thousand-new-covid19-cases-reported-in-the-country-in-the-last-24-hours-318-deaths-22090697.html?itm_source=website&itm_medium=homepage&itm_campaign=p1_component

देश में कोरोना के नए मामले सामने आए हैं। पिछले 24 घंटे में देशभर में मिले 22 हजार नए केस। 24 हजार कोरोना मरीज रिकवर हुए। 318 लोगों की कोरोना संक्रमण के कारण मौत। देश में कोरोना की दूसरी लहर में कमी।

नई दिल्ली, एएनआइ। देश में कोरोना महामारी का कहर कम होता नजर आ रहा है। देश में पिछले 24 घंटों में कोरोना के 22 हजार नए मामले सामने हैं। इस दौरान 300 से ज्यादा की मौत हुई है। केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय के ताजा आंकड़ों के मुताबिक, देश में बीते 24 घंटों में कोरोना के 22 हजार 431 मामले सामने आए हैं। वहीं, 24 हजार 602 मरीज कोरोना संक्रमण से रिकवर हुए हैं। इस दौरान 318 लोगों की मौत हुई है। देश में कोरोना महामारी की दूसरी लहर का कहर अब धीरे-धीरे खत्म होता नजर जा रहा है। देश में कोरोना के एक्टिव केस में कमी दर्ज की जा रही है तो देशभर में नए केस भी 20 हजार से 30 हजार के बीच ही आ रहे हैं। इसके साथ ही रिकवरी रेट में भी सुधार हो रहा है। हर दिन मौतों का आंकड़ा 500 से नीचे दर्ज किया जा रहा है।

देशभर में अब तक कोरोना से कुल 3 करोड़ 38 लाख 93 हजार तीन लोग संक्रमित हो चुके हैं। जिनमें से 3 करोड़ 31 लाख 92 हजार 683 मरीज कोरोना के रिकवर हो चुके हैं। 4 लाख 49 हजार 883 लोगों की मौत हो चुकी है। फिलहाल देश के अलग-अलग अस्पतालों में 2 लाख 37 हजार 364 मरीजों का इलाज किया जा रहा है।

देश में कोरोना की स्थिति:

24 घंटे में नए कोरोना मरीज - 22,431

24 घंटे में कोरोना से रिकवर हुए मरीज - 24,602

24 घंटे में कोरोना से हुई मौतें - 318

देश में अब तक कोरोना से हुई मौतें - 4,49,856

देश में अब तक कोरोना से ठीक हुए लोग - 3,32,00,258

देश में अब तक कोरोना से संक्रमित हुए लोग - 3,38,93,003

केरल बना चिंता का कारण, 24 घंटों में 12 हजार नए केस

देश में भले ही कोरोना के नए मामलों की संख्या काफी कम हो गई हो लेकिन दक्षिण भारत का राज्य केरल अभी भी चिंता का कारण बना हुआ है। केरल में बुधवार को कोरोना वायरस संक्रमण के 12,616 नए मामले सामने आए तथा महामारी से 134 और मरीजों की मौत हो गई।

Covid-19 side effect may include redness, inflammation of hands, feet: Study (Hindustan Times: 20211007)

https://www.hindustantimes.com/lifestyle/health/covid19-side-effect-may-include-redness-inflammation-of-hands-feet-study-101633540929083.html

Redness and inflammation in the hands and feet, referred to as Covid toe condition, may be one of the side effects of Covid-19, a new study published in the 'British Journal of Dermatology' has noted.

Redness and inflammation in the hands and feet, referred to as Covid toe condition, may be one of the side effects of Covid-19, a new study published in the 'British Journal of Dermatology' has noted.

Scientists studying the skin condition believe it could be the human immune system's response to the virus which causes Covid-19 and usually develops within one to four weeks of being infected. It can result in fingers and toes becoming swollen or changing colour and also causes some chilblain-type lesions.

"The epidemiology and clinical features of chilblain-like lesions have been extensively studied and published, however, little is known about the pathophysiology involved," said Dr Charles Cassius, the senior author of the study published this week.

"Our study provides new insights," he said.

Mostly this particular side effect disappears after a few days but in some cases, the condition can last for a few months. Researchers behind the study, based on blood and skin tests, looked at 50 participants with so-called "Covid toes" and 13 with similar chilblain-lesions that arose before the pandemic.

They discovered two parts of the immune system may be responsible for why the symptoms appear as the body fights off the coronavirus. One is an antiviral protein, called Type 1 interferon, and the other is an antibody that mistakenly targets and reacts with a person's own cells and tissues, as well as the invading virus.

Cells lining blood vessels that supply the affected area also appear to play a critical role in the development of Covid toes and chilblains.

Dr Veronique Bataille, a consultant dermatologist and spokesperson for the British Skin Foundation, told the BBC that Covid toe was seen very frequently during the early phase of the pandemic. However, it has been less common in the current Delta variant wave, which might be down to more people being vaccinated or having some protection against Covid from past infections.

चेस्ट पेन और हार्ट अटैक के दर्द

सामान्य चेस्ट पेन और हार्ट अटैक के दर्द में जानें फर्क, अलर्टनेस बचा सकती है जान (Hindustan: 20211007)

https://www.livehindustan.com/lifestyle/story-know-difference-between-heart-attack-pain-and-noncardiac-chest-pain-4760852.html

बिजी लाइफस्टाइल और खराब खान-पान के चलते हार्ट के मरीजों की संख्या पूरे विश्व में लगातार बढ़ रही है। ऐसे में सतर्कता बेहद जरूरी है। बीते कुछ दिनों में ऐसे कई मामले सामने आए हैं जिनमें कम उम्र के लोगों में हार्ट अटैक से मौत की खबरें आईं। कई बार लोग समझ ही नहीं पाते कि उन्हें हार्ट अटैक हुआ है और जब पता चलता है तब तक बहुत देर हो जाती है। इस कन्फ्यूजन से बचने के लिए यहां सामान्य सीने के दर्द और हार्ट अटैक के दर्द में कुछ फर्क बताए जा रहे हैं। इन्हें समझकर आप समय रहते सही कदम उठा सकते हैं।

अलर्टनेस बचा सकती है जान

हार्ट अटैक होने पर सही वक्त पर इलाज मिले तो मरीज की जान बच सकती है। अब सवाल यह है कि कैसे पता चला कि सीने में होने वाला दर्द हार्ट अटैक ही है। हिंदुस्तान से बातचीत में दिल्ली के कंसल्टेंट फिजिशियन इंटेंसिविस्ट, डॉ अमरेंद्र झा में हार्ट अटैक और सामान्य सीने के दर्द में फर्क बताया।

ऐसे पहचानें दर्द में फर्क

डॉक्टर झा ने छह पॉइंट्स में फर्क बताया। उन्होंने कहा, अपने हाथ के दोनों पंजों की उंगलियों को आपस में फंसाकर सीने के बीच में रखें। अगर दर्द इतनी जगह घेरता है तो यह हार्ट अटैक का दर्द हो सकता है। इस दर्द में ऐसा लगेगा कि आपकी छाती को कोई फाड़ रहा है, भारीपन लग सकता है या ऐसा लगेगा कि आपके सीने पर कोई भारी चीज रख दी गई है। वहीं सामान्य दर्द में आप एक उंगली से भी इंडिकेट कर सकते हैं कि इस जगह दर्द हो रहा है। वह छाती में बड़े एरिया में फैला दर्द नहीं होता।

सीने से गर्दन तक बढ़ सकता है दर्द

हार्ट अटैक का दर्द एक जगह से दूसरी ओर बढ़ता है। सीने के बीच से आपके जबड़ों, गर्दन और लेफ्ट साइड में हाथ में फैलता महसूस होता है। सामान्य दर्द जबड़े या गर्दन की तरफ नहीं बढ़ता है। हार्ट अटैक वाला दर्द वजन उठाने या कुछ काम करने से बढ़ जाता है जबकि सामान्य दर्द वजन उठाने या

कुछ काम करने से बढ़ता नहीं है। इसके अलावा कार्डिएक चेस्ट पेन ज्यादा देर के लिए होता है। अगर आपको या आपके किसी करीबी को इस तरह के लक्षण दिखते हैं तो तुरंत डॉक्टर से संपर्क करें। अगर हॉस्पिटल दूर है तो किसी डॉक्टर से फोन पर सलाह लेकर Tablet ecospirin 300mg stat या डिस्प्रिन की गोली चबाकर या पानी में घोलकर खा लें।

रोबोटिक तकनीक

नई रोबोटिक तकनीक से रीढ़ की सफल सर्जरी (Hindustan: 20211007)

https://epaper.livehindustan.com/

● सर्जरी के दौरान खून की क्षति कम होती है

● मरीज को दर्द कम होता है

● मरीज तेजी से सर्जरी के बाद उबरने में सक्षम होता है

रीढ़ की हड्डी जैसे संवेदनशील अंगों की सटीक सर्जरी करने के लिए देश में नई रोबोटिक तकनीक ओ आर्म एक्स स्टील्थ पेश की गई है। डॉक्टरों के मुताबिक, इस तकनीक से सर्जरी के दौरान गलती का खतरा अन्य रोबोटिक तकनीक के मुकाबले बेहद कम होता है। इंडियन स्पाइनल इंजुरी सेंटर ने बुधवार को पहली बार इस तकनीक से दो किशोरियों की रीढ़ की सफल सर्जरी की है। इनमें एक मरीन स्कोलियोसिस और दूसरी स्पाइनल टीबी बीमारी से पीड़ित थी।

13 वर्षीय स्वाति को शुरुआत में स्कोलियोसिस का पता चला था, जिससे रीढ़ की हड्डी में आई विकृति की वजह से वह 85 डिग्री पर झुक गई थी। वहीं, 16 वर्षीय मन्नतप्रीत 2018 से स्पाइनल टीबी से पीड़ित थी। अंगों में कमजोरी के कारण टीबी के इलाज के बाद चलने में कठिनाई हो रही थी। अस्पताल के निदेशक डॉक्टर एच एस छाबड़ा का कहना है कि इस नई रोबोटिक ओ आर्म तकनीक के साथ न सिर्फ सर्जरी सटीक होती है, बल्कि पैरालाइसिस का खतरा कम होने के साथ मरीज को रेडियेशन के संपर्क में आने की जरूरत भी नहीं होती है।

अस्पताल के निदेशक डॉ. छाबड़ा ने कहा कि एक गलत या अतिरिक्त कट मरीज को जीवन भर के लिए प्रभावित कर सकता है। इस तकनीक में एक रोबोटिक भुजा के जरिए डॉक्टर दूर से ही सर्जरी करते हैं और मरीज के शरीर में सर्जरी के दौरान स्क्रू कहां लग रहा है और किधर कट लग रहा है, वह रियल टाइम में देख सकते हैं।

कैंसर

कोरोना महामारी के दौरान लगे लाकडाउन के कारण हर सातवें कैंसर मरीज की सर्जरी में देरी (Dainik Jagran: 20211007)

https://www.jagran.com/world/united-kingdom-surgery-of-every-seventh-cancer-patient-delayed-due-to-corona-epidemic-jagran-special-22090823.html

लाकडाउन के दौरान ऐसी जगहों पर भी लोगों को सर्जरी में परेशानी का सामना करना पड़ा।

अध्ययन में पाया गया कि जिन देशों में कोरोना महामारी के पहले से ही अस्पतालों की क्षमता कम थी वहां लाकडाउन ने ज्यादा मुश्किल परिस्थितियां पैदा कीं। ऐसे देशों में ज्यादा मरीजों की सर्जरी को रद करना पड़ा।

लंदन, प्रेट्र। कोरोना महामारी के दौरान लगे लाकडाउन के कारण कैंसर के हर सातवें मरीज की सर्जरी में देरी हुई। भारत समेत 61 देशों में किए गए अध्ययन से यह बात सामने आई है। द लैंसेट ओंकोलाजी जर्नल में प्रकाशित अध्ययन में पाया गया कि लाकडाउन के दौरान कई मामलों में कैंसर के मरीजों की पहले से तय सर्जरी भी नहीं हो पाई। कम आय वाले देशों में यह संकट सबसे ज्यादा देखा गया। ब्रिटेन की यूनिवर्सिटी आफ बर्मिंघम के शोधकर्ताओं ने इस अध्ययन को अंजाम दिया है।

कई लोगों ने असमय गंवाई जान : अध्ययनकर्ताओं का कहना है कि कोरोना महामारी के दौरान लाकडाउन की वजह से सर्जरी में देरी कुछ कैंसर मरीजों के लिए जानलेवा साबित हुई। इन मरीजों को समय पर इलाज मिलता तो शायद उनकी जान बचाना संभव होता। पूर्ण लाकडाउन के समय छह हफ्ते से ज्यादा समय से सर्जरी का इंतजार कर रहे बहुत से मरीजों को अपनी पहले से तय सर्जरी रद करानी

पड़ी। निम्न एवं मध्यम आय वर्ग वाले देशों में कैंसर के एडवांस्ड स्टेज वाले भी बहुत से मरीज सर्जरी नहीं करा पाए, जबकि उन्हें तत्काल जरूरत थी। यह भी देखा गया कि पूर्ण लाकडाउन के दौरान ऐसी जगहों पर भी लोगों को सर्जरी में परेशानी का सामना करना पड़ा, जहां संक्रमण के मामले अपेक्षाकृत कम थे।

उम्रभर के लिए बढ़ गया खतरा : कोरोना के कारण देर से सर्जरी कराने वाले मरीजों में भविष्य में दोबारा कैंसर होने का खतरा बढ़ा हुआ पाया गया। इस खतरे से बचने के लिए जरूरी है कि मरीज कुछ-कुछ समय के अंतराल पर नियमित रूप से जांच कराते रहें। डाक्टरों को यह प्रयास करना होगा कि सामान्य परिस्थिति से इतर, इस तरह के मरीजों को कम समय के अंतराल पर नियमित जांच के लिए बुलाएं।

गरीब देशों में हुई ज्यादा परेशानी : अध्ययन में पाया गया कि सर्जरी से वंचित रह जाने वाले इन मरीजों में हर आयु के लोग शामिल रहे। इनमें ऐसे मरीज भी थे, जिन्हें कैंसर के साथ कोई अन्य परेशानी नहीं थी और उन्हें समय पर इलाज देकर भविष्य में कई गंभीर खतरों से बचाना संभव हो सकता था।

भविष्य के लिए मिली जरूरी सीख : शोधकर्ताओं का कहना है कि वायरस के संक्रमण को रोकने के लिए लाकडाउन जैसा कदम बहुत जरूरी था, लेकिन इसके कुछ दुष्प्रभावों को देखते हुए भविष्य के लिए जरूरी सीख मिली है। सरकारों को ध्यान देना होगा कि बात चाहे कोरोना की हो या ऐसे ही किसी अन्य संक्रमण की, लाकडाउन के समय भी यह सुनिश्चित करना होगा कि कुछ गंभीर मामलों में मरीजों को पर्याप्त इलाज मिलता रहे। अध्ययन के नतीजे सरकारों को भविष्य में ऐसी किसी परिस्थिति में निर्णय लेने में मदद करेंगे।

Nearly 6,000 more may get cancer by 2025 (The Hindu: 20211007)

https://www.thehindu.com/news/national/telangana/nearly-6000-more-may-get-cancer-by-2025/article36867967.ece?homepage=true

Data taken from 'Profile of Cancer and Related Factors' released by NCDIR of ICMR in September

Around 6,000 more people in Telangana may be diagnosed with cancer in 2025 compared to figures in 2020. While 47,620 people were projected to have cancer in 2020, the incidence in 2025 is estimated to be 53,565, which means 12.48% (5,945) more might get cancer in the five-year period.

This has alarmed oncologists from the State, who have appealed to people to take measures to prevent the disease, loss of lives, and financial and emotional distress associated with it.

The projections are from the 'Profile of Cancer and Related Factors-Telangana' released by the National Centre for Disease Informatics and Research (NCDIR) of the Indian Council of Medical Research (ICMR) in the fourth week of September.

Fact sheet

Apart from the projected increase in cancer cases, it has details on the leading sites of cancer in men and women, cumulative risk of developing cancer of any site in 0-74 years of age group in both the genders, proportion of cancer sites associated with tobacco usage, and other aspects.

The cumulative risk, leading sites of cancer and proportion of cancers in sites associated with tobacco use are based on data from 2014-16 and calculated for the Population Based Cancer Registry (PBCR) areas.

PBCR is located at the Nizam's Institute of Medical Sciences. Principal investigator at PBCR Dr. G. Sadashivudu said that the data is taken from all cancer institutes and labs in Hyderabad, which conduct diagnostic tests for the disease.

And data for Hospital Based Cancer Registry is drawn from NIMS, Indo-American Cancer Hospital & Research Institute, MNJ Institute of Oncology and Regional Cancer Centre.

Main sites

An important observation from the fact sheet is that the leading site for cancer among women is breast (35.5%), followed by cervix uteri (8.7%), and ovary (6.9%). In case of men, the leading site of cancer is mouth (13.3%), followed by lungs (10.9%), and tongue (7.9%).

Risk factors

One needs to be aware of the factors associated with risk of developing cancer to know what should be avoided, and aspects of life that need to be changed. The fact sheet states that behavioural and environmental risk factors are tobacco and alcohol use, unhealthy diet, physical inactivity, obesity, infections, and air pollution.

Dr. Sadashivudu, who is also the Head of the oncology department at NIMS, said that since 42.2% of cancer risk in men, and 13.5% of risk in women is associated with tobacco use, avoiding tobacco might help in preventing cancer.

"Diagnosing cancers in early stages helps in better outcomes and cure. So, early screening is important. People can stop cancer by exercising, opting healthy food, avoiding alcohol and tobacco," he suggested.

मलेरिया वैक्सीन

दुनिया को 60 साल बाद मिली पहली मलेरिया वैक्सीन, भारत के लिए जगी उम्मीद (Navbharat Times: 20211007)

https://navbharattimes.indiatimes.com/world/science-news/all-you-need-to-know-about-worlds-first-malaria-vaccine-mosquirix-approved-by-who-how-it-works/articleshow/86831403.cms

हर साल मलेरिया से लाखों लोगों को जान चली जाती है। अफ्रीकी देशों में बच्चे इसका सबसे बड़ा शिकार बनते हैं। दशकों से चल रही रिसर्च के बाद आखिरकार WHO ने पहली मलेरिया वैक्सीन के इस्तेमाल पर मुहर लगा दी है।

कोरोना वायरस की त्रासदी के पहले से दुनियाभर में हर साल चार लाख लोगों की जान ले रहा था मलेरिया। इसे रोकने के लिए वैक्सीन बनाना दशकों से एक बड़ी चुनौती था। अब विश्व स्वास्थ्य संगठन ने दुनिया की पहली मलेरिया वैक्सीन के इस्तेमाल पर मुहर लगा दी है। WHO चीफ टेड्रोस ऐडनम ने इस घातक बीमारी से चल रही जंग में एक ऐतिहासिक दिन करार दिया है। इस वैक्सीन का इस्तेमाल अफ्रीकी देशों में उन बच्चों पर किया जाएगा जिन्हें इस बीमारी का ज्यादा खतरा है। मलेरिया का तोड़ निकालने की कोशिश करीब 80 साल से चल रही है और करीब 60 साल से आधुनिक वैक्सीन डिवेलपमेंट पर रिसर्च जारी है। आखिर क्या वजह रही जो इतने लंबे समय से इस बीमारी की वैक्सीन

बनाना इतना मुश्किल रहा और इस नई वैक्सीन ने यह कैसे कर दिखाया? (AP Photo/Karel Prinsloo; REUTERS/Jim Young)

कैसे फैलता है मलेरिया?

मलेरिया Plasmodium falciparum पैरासाइट से फैलता है। यह Anopheles मच्छर के काटने से इंसानों में दाखिल होता है। इस पैरासाइट का जीवनचक्र इतना जटिल होता है कि इसे रोकने के लिए वैक्सीन बनाना इतने लंबे वक्त से लगभग नामुमकिन सा हो गया था। इसका जीवनचक्र तब शुरू होता है जब मादा मच्छर इंसान को काटती है और खून में Plasmodium के स्पोरोजॉइट (sporozoite cells) को रिलीज कर देती है। ये स्पोरोजॉइट इंसानी लिवर में बढ़ते जाते हैं और मीरोजॉइट (merozoite) बन जाते हैं। धीरे-धीरे ये लाल रक्त कोशिकाओं (red blood cells) को शिकार बनाते हैं और इनकी संख्या बढ़ती रहती है।

इसकी वजह से बुखार, सिरदर्द, सर्दी, मांसपेशियों में दर्द और कई बार अनीमिया (anemia) भी हो जाता है। ये पैरासाइट के प्रजनन के लिए जरूरी गमीटोसाइट (gametocyte) भी खून में रिलीज करते हैं। जब दूसरा मच्छर शख्स को काटता है तो खून के साथ ये गमीटोसाइट उसके शरीर में चले जाते हैं। चुनौती की बात यह है को जीवन के हर चरण पर पैरासाइट की सतह पर लगा प्रोटीन (malarial parasite surface protein) बदलता रहता है। इस वजह से यह शरीर के इम्यून सिस्टम से बचता रहता है। वैक्सीन आमतौर पर इस प्रोटीन को टार्गेट करके ही बनाई जाती हैं और इसलिए अभी तक इसमें सफलता नहीं मिल सकी थी। (तस्वीर: James Gathany/CDC via AP)

यह वैक्सीन क्यों खास?

Mosquirix यहीं पर कारगर साबित होती है। यह पैरासाइट की स्पोरोजॉइट स्टेज पर ही हमला करता है। वैक्सीन में वही प्रोटीन लगाया गया है जो पैरासाइट में उस स्टेज पर लगा होता है। इम्यून सिस्टम इस प्रोटीन को पहचानता है और शरीर में प्रतिरोधक क्षमता पैदा करता है। Mosquirix को 1980 के दशक में बेल्जियम में SmithKline-RIT की टीम ने बनाया था जो अब GlaxoSmithKline (GSK) का हिस्सा है।

हालांकि, इस वैक्सीन को भी लंबे वक्त तक सफलता नहीं मिल सकी। साल 2004 में 'The Lancet' में छपी स्टडी में बताया गया कि इसके सबसे पहले बड़े ट्रायल को 1-4 साल के 2000 बच्चों में मोजांबीक में जब किया गया तो वैक्सिनेशन के 6 महीने बाद इन्फेक्शन 57% कम हो गया था। (फाइल फोटो: AP Photo/Jerome Delay)

आसानी से नहीं मिली सफलता

इसके बाद धीरे-धीरे डेटा निराशाजनक होने लगा। साल 2009-2011 के बीच 7 अफ्रीकी देशों में ट्रायल किया गया तो 6-12 हफ्ते के बच्चों में पहली खुराक के बाद कोई सुरक्षा नहीं देखी गई। हालांकि, पहली खुराक 17-25 महीने की उम्र पर देने से इसमें 40% इन्फेक्शन और 30% गंभीर इन्फेक्शन कम पाए गए।

रिसर्च जारी रही और साल 2019 में WHO ने घाना, केन्या और मालावी में एक पायलट प्रोग्राम शुरू किया जिसमें 8 लाख से ज्यादा बच्चों को वैक्सीन दी गई। इसके नतीजों के आधार पर WHO ने वैक्सीन के इस्तेमाल को मंजूरी दे दी है। 23 लाख से ज्यादा खुराकें देने के बाद घातक मामलों में 30% की गिरावट देखी गई है। स्टडी में वैक्सीन का बच्चों के दूसरे वैक्सिनेशन या बीमारियों पर नकारात्मक असर नहीं पड़ा है। (फाइल फोटो: AP Photo/Jerome Delay)

ऐतिहासिक दिन...

मैंने अपने करियर की शुरुआत मलेरिया रिसर्चर के तौर पर की थी और मैं इस दिन का इंतजार कर रहा था जब हमारे पास इस प्राचीन और भयानक बीमारी के लिए असरदार वैक्सीन होगी। वह दिन आज है और ऐतिहासिक है...

WHO के डेटा के मुताबिक साल 2017 में मलेरिया के 92% मामले अफ्रीका के सब-सहारा इलाके में पाए गए और बाकी दक्षिणपूर्व एशिया और पूर्वी भूमध्य सागर के इलाकों में। आधे मामले नाइजीरिया, कॉन्गो, मोजांबिक, भारत और युगांडा में पाए गए। दुनियाभर में साल 2017 में मलेरिया से 4.35 लाख मौतें हुईं जो पहले के मुकाबले कम थीं। अभी इस वैक्सीन को सिर्फ अफ्रीकी देशों के लिए मंजूरी मिली है और अब दुनियाभर में इसे रोलआउट करने पर प्लान बनाया जाएगा। WHO चीफ का कहना है कि वैक्सीन एक शक्तिशाली हथियार है लेकिन कोविड-19 की तरह ही सिर्फ वैक्सीन पर भरोसा नहीं करना होगा। अभी भी मच्छरदानियों और बुखार का ध्यान रखना जरूरी है। (Reuters, Navesh Chitrakar)

‘Historic day’: WHO go-ahead for broad use of first-ever malaria vaccine for children in Africa (Hindustan Times: 20211007)

https://epaper.hindustantimes.com/Home/ArticleView

GENEVA : The first vaccine for malaria, the mosquito-borne disease that kills about 400,000 people each year, is set to be deployed more widely after more than three decades of work and about $1 billion in investment.

The vaccine developed by GlaxoSmithKline Plc and its partners won a recommendation from the World Health Organization (WHO) on Wednesday for use in children in sub-Saharan Africa and other regions with moderate to high transmission. It marks a turning point in a battle against the parasite that causes malaria.

The shot prevented only about four in 10 malaria cases among children who received four doses in a large study, but the injection, along with other measures, could still save hundreds of thousands of lives. Now the focus will shift to getting it to more people following a pilot program in Africa that began in 2019.

Following a meeting of the United Nations health agency’s vaccine advisory group, WHO director-general Tedros Adhanom Ghebreyesus spoke of “a historic moment”.

“Today’s recommendation offers a glimmer of hope for the continent, which shoulders the heaviest burden of the disease and we expect many more African children to be protected from malaria and grow into healthy adults,” Matshidiso Moeti, WHO regional director for Africa, said in a statement.

The WHO said its decision was based on results from ongoing research in Ghana, Kenya and Malawi that has tracked more than 800,000 children since 2019.

Many vaccines exists against viruses and bacteria but this was the first time that the WHO recommended for broad use a vaccine against a human parasite.

GSK, which has developed the shot with non-profit organisation PATH, committed to donating as many as 10 million doses for the ongoing pilot, and to supply as many as 15 million doses annually. Agencies

वायु प्रदूषण

जहरीली हवा में सांस लेने से फेफड़े हो रहे हैं खराब, डाइट में ये 3 Vitamin खाकर करें बचाव (Navbharat Times: 20211007)

https://navbharattimes.indiatimes.com/lifestyle/health/3-vitamins-that-can-protects-the-lungs-from-damage-from-air-pollution/articleshow/86831076.cms?story=5

बढ़ते प्रदूषण और संक्रमण को देखते हुए अपने फेफड़ों को स्वस्थ रखना किसी चुनौती से कम नहीं है। इन्हें स्वस्थ रखने के लिए अपने आहार में कुछ विटामिन्स को शामिल करना बेहद जरूरी है।

कोरोनावायरस के साथ वायु प्रदूषण भी लोगों के स्वास्थ्य को प्रभावित कर रहा है। हमारे श्वसन तंत्र में प्रवेश करने वाले छोटे -छोटे धूल के कण जलन और फेफड़ों से संबंधित कई समस्याएं पैदा कर सकते हैं। जिससे सांस लेने में तकलीफ होने लगती है। स्थिति को नियंत्रित रखने के लिए आप दवा तो लेते ही होंगे, लेकिन कुछ विटामिन्स भी हैं, जिनमें फेफड़ों को स्वस्थ्य बनाने की अच्छी खासी क्षमता है।

इतना ही नहीं सेल डैमेज को रोकने के लिए भी इन्हें लेना बहुत फायदेमंद है। अपने आहार में इन विटामिन्स का सेवन बढ़ा लिया , तो सांस फूलना और जलन जैसी समस्या से राहत पाई जा सकती है। तो चलिए आज के इस आर्टिकल में हम आपको 3 ऐसे विटामिन्स बता रहे हैं, जिन्हें फेफड़ों के बेहतर स्वास्थ्य के लिए आपको जरूर लेना चाहिए।

विटामिन-ए का सेवन शुरू करें-

प्रदूषित धुएं और संक्रमण की वजह से फेफड़े कमजोर होने लगे हैं। इनकी क्षमता को बरकरार रखने के लिए जितना हो सके विटामिन - ए का सेवन करें। वसा में घुलनशील पोषक तत्व फेफड़ों के स्वास्थ्य के लिए दूसरा सबसे जरूरी महत्वपूर्ण पोषक तत्व है। यह न केवल आपकी प्रतिरक्षा बढ़ाएगा बल्कि कुछ मात्रा में इसके सेवन से फेफड़ों के ऊतकों को रिपेयर करने में भी मदद मिलेगी।

अधिक मात्रा में विटामिन -ए लेने की जरूरत नहीं-

अच्छी बात ये है कि आपको बहुत ज्यादा मात्रा में विटामिन- ए लेने की जरूरत नहीं होती। वसा में घुल जाने के कारण यह पोषक तत्व शरीर में लंबे समय तक सुरक्षित रहता है और शरीर को कम मात्रा में ही इसकी जरूरत होती है। डेयरी उत्पाद , मछली, खरबूजा, ब्रोकोली, गाजर आपके शरीर में विटामिन ए

की कमी को पूरा करने के लिए काफी हैं। पर ध्यान रखें, लंबे समय तक इसका सेवन करने से आप भविष्य में लीवर और हड्डियों की समस्या का अनुभव कर सकते हैं।

आहार में विटामिन - सी शामिल करें

विटामिन - सी कई स्वास्थ्य समस्याओं के लिए बहुत फायदेमंद है। आपके फेफड़ों को क्रॉनिक डिजीज से बचाना उनमें से एक है। एक दिन में इस विटामिन का पर्याप्त सेवन करने से यह प्रतिरक्षा को बढ़ावा देने के साथ त्वचा में कोलेजन के उत्पादन को बढ़ावा देता है। दरअसल, धुम्रपान करने और प्रदूषण के कारण फेफड़ों में फ्री रेडिकल्स और विषाक्त पदार्थों की मौजूदगी शरीर में सूजन पैदा करती है। ऐसे में विटामिन- सी , जो ज्यादातर खट्टे फलों में पाया जाता है, मुक्त कणों और विषाक्तत पदार्थों से लडऩे के अलावा हानिकारक अणुओं से छुटकारा दिलाने में फायदेमंद है। इतना ही नहीं विटामिन- सी लंग्स टिशू डैमेज रेट को कम करता है, जिससे स्वास्थ्य बहुत जल्दी ठीक हो जाता है।

विटामिन- सी से होता है फेफड़ों की क्षमता में सुधार-

एलर्जी, अस्थमा और क्लीनिकल इम्यूनोलॉजी जर्नल में प्रकाशित 2014 के एक अध्ययन के अनुसार, विटामिन सी फेफड़ों के काम करने की क्षमता में सुधार करता है। बता दें, कि इस पोषक तत्व के फायदे खासतौर से इसमें मौजूद एंटीऑक्सीडेंट गुणों के कारण हैं। शरीर में इसकी कमी को पूरा करने के लिए खट्टा फल, अमरूद, कीवी, ब्रोकोली, केल और जामुन खाना चाहिए।

संक्रमण से बचाएगा विटामिन डी का सेवन

आप शायद नहीं जानते होंगे, लेकिन दांत और हड्डियों को मजबूत बनाने के साथ विटामिन डी श्वसन संक्रमण से भी बचाता है। अगर किसी को क्रॉनिक ऑब्स्ट्रेक्टिव पल्मोनरी डिसीज है, तो विटामिन डी इसका बेहतरीन इलाज है। एक रिसर्च के अनुसार, शरीर में विटामिन डी की कमी से घरघराहट, ब्रोंकाइटिस, अस्थमा और अन्य श्वसन समस्याओं का जोखिम बढ़ता है।

ऐसे में इस पोषक तत्व को अपने आहार में शामिल करने से फेफड़ों के कामकाज में सुधार हो सकता है। वैसे तो कई लोग विटामिन डी की गोलियां लेते हैं, लेकिन सूर्य के प्रकाश से आपको अच्छी मात्रा में विटामिन डी प्राकृतिक तौर पर मिल जाता है। अगर ऐसा करना संभव नहीं है, तो कुछ खाद्य पदार्थ जैसे ट्यूना, सैल्मन और अंडे की जर्दी विटामिन डी की आपूर्ति करने के लिए बढिय़ा विकल्प हैं।

विटामिन-D की कमी से मर्दों को हो सकती है इनफर्टिलिटी की समस्या, किसी भी कीमत पर न करें नजरअंदाज

प्रदूषित हो रहे वातावरण और कोरोना के माहौल में फेफड़ों की देखरेख बहुत ज्यादा जरूरी है। ऊपर बताए गए विटामिन का प्राकृतिक रूप से सेवन करें। बहुत फायदा होगा।

An Expert Explains: WHO's stark message on air quality — and what India must do (The Indian Express: 20211007)

https://indianexpress.com/article/explained/explained-whos-stark-message-on-air-quality-and-what-india-must-do-7556737/

India has 37 of the world's 50 most polluted cities, despite its air quality standards being more lax.

In updating its already strict air quality guidelines (AQGs), the WHO last month sent out a stark message: that the impact of poor air quality on public health is at least twice as bad as previously estimated. India has 37 of the world's 50 most polluted cities, despite its air quality standards being more lax. For instance, its standards for PM2.5 and PM10 are 60 and 100 µg/m3 respectively (over 24 hours), while the WHO's new standards are 15 and 45 µg/m3 (over 24 hours).

Not surprisingly, India's air pollution-influenced mortality rates are among the worst. The Global Burden of Disease estimates that India lost 1.67 million lives in 2019 directly as a result of breathing polluted air, or because of pre-existing conditions exacerbated by air pollution. Uttar Pradesh had the biggest share at 3.4 lakh, Maharashtra had 1.3 lakh, and Rajasthan 1.1 lakh.

The average life expectancy in Delhi is 6.4 years lower than the national average of 69.4, and the number is starting to fall for even coastal cities like Mumbai and Chennai. Globally, it is estimated that exposure to PM2.5 kills 3.3 million people every year, most of them in Asia.

India's predicament

The problem is, our economic growth is built on fossil fuels. Coal, oil, and natural gas account for roughly 75% of our power generation and >97% of road transport, but they come at the cost of heavy CO, SO2, NO2, ozone, and particulate matter emissions. And herein lies the predicament: India prides itself on being the fastest growing large economy, and changing the way we generate power and clamping down on petrol and diesel vehicles is seen as throttling economic progress.

Yet at the same time, the ever-growing need for energy and personal vehicles is worsening the public health crisis. There is now almost a sense among people that toxic air is just a part of life in the city.

The killer threat

It is difficult to overstate the seriousness of the situation. The health impacts of PM2.5 exposure now include lung cancer, cerebrovascular disease, ischaemic heart disease and acute lower respiratory illness, besides exacerbating ailments like depression. Exposure to ozone has been linked to chronic obstructive pulmonary disease (COPD). Prolonged exposure to air pollutants affects newborns and babies still in the womb. While mothers may have to deal with the trauma of premature deliveries and stillbirths, foetuses face increased risk of being born with lungs that are not yet developed to function properly, and congenital defects that can impact the rest of their lives. Simply put, air pollution is a threat to generations even before they are born.

Losses to economy

A 2019 study found that India's horrendous air quality erased 3% of its GDP for the year and caused a loss of nearly Rs 7 lakh crore (~USD 95 billion). Most of the loss was due to employees failing to show up at work, far fewer people stepping out to buy goods, and foreign tourists staying away after health warnings. Official figures indicate a loss of 820,000 jobs in the tourism industry and 64% of businesses squarely blame air pollution.

Poor air quality was found to offset 67% of the cost advantage of using solar panels over grid power, as ground-level smog and the particulate matter chokes their power output. Also, several studies have noted a 25% drop in crop yield for wheat and rice after prolonged exposure to PM and ozone.

Way forward

It's a crisis that affects everyone. What India needs to do without delay is to revisit its National Ambient Air Quality Standards, revise them down to WHO levels, and implement them without exception. Unfortunately, the new WHO guidelines are not legally binding, so a critical first step is to conduct nationwide epidemiological studies and gather expansive raw health data on air pollution as a risk factor. Without this it would be difficult to get a picture of just how many Indians, regardless of age, gender and occupation, are suffering under bad air, and would render efforts to tackle the problem meaningless.

Most importantly, the authorities must acknowledge that Indians are no less susceptible to air pollution — so to continue with laxer standards for the sake of industry places a life-threatening burden on the average resident.

The China example

China went through a similar phase. In transforming itself as the world's manufacturing hub, its cities were subjected to manic air pollution and Beijing was notorious for its smog. But it

has had success in tackling the issue, even though after 10 years it is still not WHO-compliant. It has prioritised zero-emissions transport, staggered the use of internal combustion engine vehicles, and enforced a strict clampdown on point sources of pollution that allows for few exceptions, if at all. What's most impressive is that the country is now the largest market for electric vehicles and clean energy, its per capita incomes have never been higher, and its influence as an economic powerhouse is still on the rise. It refutes the myth that clamping down on air pollution stymies economic growth.

India's National Clean Air Programme (NCAP) attempts to incorporate such solutions, but e-mobility and clean energy in India are not yet dominant in their respective sectors. The good news is states like Gujarat, Maharashtra, and Telangana have introduced policies to speed up their market shares, and EVs' year-on-year sales are posting record figures.

The share of renewable energy has also risen dramatically since 2015 to cross 100 GW in August 2021, which is almost a quarter of the country's installed power capacity. But there is a long way to go still.

Better monitoring

Another equally essential step is to expand the country's air quality monitoring network. The CPCB-controlled CAAQMS monitors are expensive — each costs upward of Rs 20 lakh — and there are only 312 of them spread across 156 cities. This leaves many urban and rural pockets unmonitored to understand the full extent of their air pollution.

Fortunately a number of new, low-cost monitors have entered service, that capture readings for not only PM2.5 and 10 but also gases like NO2, SO2, methane, and secondary volatile organic compounds. Still, the Centre and state governments must boost the density of the CAAQMS network to fully inform the science behind the corrective measures, and all of this needs to happen on priority. Given the scale of our public health crisis, wasting any more time could very well lead to a public health emergency.

Diabetes

Important things diabetics need to know about maintaining heart health (The Indian Express: 20211007)

https://indianexpress.com/article/lifestyle/health/diabetics-maintaining-heart-health-diabetes-health-7550087/

People who suffer from diabetes need to maintain their blood pressure at 130/80 level

Data from the American Heart Association has shown 65 per cent of people with diabetes lose their lives due to some sort of heart disease or stroke.

Of the many health conditions that people live with, diabetes is considered to be one which requires most discipline in terms of food and lifestyle, else it can severely harm the body, mainly the heart.

In most cases, diabetes requires life-long treatment to keep the glucose level in the blood within the normal range. Sugar is the source of energy for our body cells, and it is stored in the liver as a form of glycogen. In diabetes, a human body becomes unable to produce enough insulin hormones; even if it can produce, it fails to utilise the hormone properly. Insulin allows our body to turn glucose into energy. If the body struggles in metabolising glucose, it can lead to high blood sugar levels.

Dr Sanjay Gogia, director, internal medicine at Fortis Hospital Shalimar Bagh, says that diabetes has some adverse consequences on health that include high cholesterol, increased chances of heart attack, and stroke.

“Data from the American Heart Association has shown 65 per cent of people with diabetes lose their lives due to some sort of heart disease or stroke. Diabetic patients have a risk of developing cardiovascular disease that is more than double that of the people who do not have diabetes. For diabetics, sugar can stay in their bloodstream and leak out of the liver into their blood, with subsequent damage to the arteries, causing them to become stiff and hard,” he explains.

So, what kind of lifestyle changes should diabetic people make?

The best way to prevent or lower the risk of heart diseases is to adopt and maintain a healthy lifestyle, the doctor says.

* Diabetes needs continuous monitoring and medical care. It is crucial to keep the blood sugar level under control.

* As diabetes often gives birth to hypertension, frequent screening is necessary to keep a track of the blood pressure level, control the blood pressure. People who suffer from diabetes need to maintain their blood pressure at 130/80 level.

* Cholesterol level must be kept under control, with the guidance of a specialist doctor.

* Losing some weight really helps to manage not only diabetes, but also cholesterol and hypertension.

* Taking out time for daily exercise is a must.

* After consulting a nutritionist, diabetics need to eat a heart-healthy diet such as the Mediterranean diet or DASH diet.

* Quit smoking.

* Stress should be managed on a daily basis.

Breast Cancer

Surgical backlogs: Wire-free breast cancer localization may help (Medical News Today: 20211007)

https://www.medicalnewstoday.com/articles/surgical-backlogs-wire-free-breast-cancer-localization-may-help#Mitigating-the-risks

In this feature, we hear from Fazila Seker, Ph.D., the CEO and co-founder of MOLLI Surgical. She explains how new technology might help reduce surgical backlogs that have built up during the COVID-19 pandemic.

COVID-19 has forced entire industries to adapt to the challenges of the pandemic to ensure people's needs can still be met.

Schools and educators have shifted curricula online to continue classes. Working from home has become the norm for many people, and clients have maintained their connections with companies virtually. The food service industry has pivoted from in-person dining to takeaway and delivery to continue serving their customers.

Unlike those other sectors, however, hospitals and clinics have not had the luxury of being able to pivot away from the way they deliver core services, apart from some adoption of telemedicine.

Their most vital services remain in-person, so they have taken significant steps not only to ensure patients' safety but to reassure them as well.

Healthcare during a pandemic

To facilitate this, organizations such as the Centers for Disease Control and Prevention (CDC)Trusted Source and the Public Health Agency of Canada have outlined careful measures to minimize the risk of infection and keep patients, staff, and healthcare workers safe.

As a best practice, entries and access points have been limited in an attempt — one that is not always successful — to deter overcrowding and ensure physical distancing is possible.

The time allotted for appointments and procedures has been extended to allow equipment and areas to be thoroughly cleaned and disinfected after use.

Better workflows and scheduling have been enacted. Staff, nurses, and doctors are kept up to date with the most recent information regarding best practices in safety and treatment options.

The most urgent surgeries and procedures have been prioritized. Additional personal protective equipment, face masks, and transparent physical barriers have been used to limit personal contact.

These extensive safety measures demonstrate not only hospitals' and administrators' commitment to keeping patients as safe as possible during the pandemic, but also the recognition that beyond the risk of COVID-19, their lifesaving services are required for various procedures, evaluations, and emergencies.

However, hospitals' revised protocols have also had unintended effects. Efforts to deter overcrowding have lowered the number of patients seen.

The reallocation of personnel and resources toward COVID-19 care has delayed the identification and treatment of new cancers.

The backlog challenge

Even before the pandemic, people were faced with inconsistent recommendations about the necessity of breast cancer screenings for given age groups, which differed by organizationTrusted Source and area.

This conflicting information may lead people to misunderstand the necessity of regular screenings. In addition, misinformation surrounding COVID-19 and anxietyTrusted Source related to the risk of infection at the hospital or during transportation have led to people refusing procedures.

The inability to provide screenings has created a significant backlog from which hospitals are continuing to attempt to recover.

A recent report showed that a 2-month stop in mammographic screenings resulted in an increase in node-positive and stage 3 breast cancer.

Some studies have shown that it could take approximately 22 weeksTrusted Source to clear the backlog in screenings in a best-case scenario. In the worst-case scenario, it could continue to grow, further delaying patient diagnoses.

Surgical delays of 12 weeks for patients with breast cancer could lead to an estimatedTrusted Source 6,100 excess deaths in the United States, 1,400 in the United Kingdom, 700 in Canada, and 500 in Australia. These figures assume that surgery is the first treatment in 83% of cases and that mortality without delay is 12%.

People who are unaware of their cancers may also be less cautious and take part in situations and activities where they may be at greater risk of infection.

When compared with a healthy population, people with cancer have been shown to be more vulnerable to more severe outcomesTrusted Source as a result of COVID-19.

Mitigating the risks

As the world continues to face the effects of the pandemic, it will be important for hospitals and clinics to remain vigilant in gathering information on best practices for safety and treatment.

To better educate patients and lessen fears surrounding the risk of infection, communication must be improved.

Hospitals must provide clearer communication regarding the facility's or clinic's safety measures and the risks associated with hospital visits. Patients must also be well-informed about the health risks associated with not only COVID-19 but also the delayed identification and treatment of breast cancer.

With this information, patients can engage in meaningful conversation with their healthcare provider to reach an outcome together, whether they are deciding on a course of treatment or to delay a procedure during the pandemic.

This sense of agency in decision-making has been associatedTrusted Source with better patient outcomes.

As part of empowering patients through information, recommendations regarding the frequency and age to begin having breast cancer screenings should be better aligned. The lack of consistency may be putting patients at greater risk for presenting with more advanced stages of breast cancer. This problem has been compounded by the inability to have screening procedures due to COVID-19.

Advances in technology can help mitigate the risks in delayed screenings through telemedicine. The use of virtual appointments has been demonstratedTrusted Source to be helpful in answering questions, providing assessments, and facilitating follow-up with breast cancer patients during the pandemic.

Adopting new technology at the hospital may be another strong method of increasing efficiency and minimizing the risk of infection for patients and healthcare providers.

Wire-guided techniques remain the standard for tumor localization, but various wire-free techniques can help optimize workflow and reduce limitations in scheduling.

When battling breast cancer, it's hard to navigate your inbox. Healthline gives you actionable advice from doctors that's inclusive and rooted in medical expertise.

Wire-guided vs. wire-free

Wire-guided localization (WGL) was introduced in the 1970s and has become the global standard in marking breast cancer lesions.

It is done by inserting one or multiple wires into the breast adjacent to the lesion, a technique that has not changed much in 50 years.

One of the drawbacks of WGL is the need to coordinate among the patient, radiologist, surgeon, and pathologist because the procedure must be done on the same day as the surgery.

This can create scheduling obstacles for the people involved as well as for the hospital. WGL is also challenging and inconvenient from a patient-experience perspective.

The technique requires the lesion to be identified on the same day as the surgery, which can mean a long day spent waiting at the hospital between the two procedures. The protruding wire can also be displaced or transected during surgery, which can lead to inaccuracy, additional procedures, or migration.

Wire-free localization, on the other hand, is a much more patient-centered and efficient approach. It involves implanting a small marker in the breast, which can be detected using a wand and visualization tablet during surgery.

The localization procedure takes about 5 minutes, and afterward, the patient has the flexibility to have the procedure done that day or leave the hospital and return within 30 days.

So, clearly, by decoupling localization from surgery, physicians can optimize their respective workflows to ensure efficient and timely care for patients.

This has been shown to lead to a 34% increase in radiology departments' scheduling capacity and a 41% increase in breast-conserving surgeries.

Going forward

As breast cancer screenings, treatment, and surgery slowly return to pre-pandemic levels, the backlog of delayed procedures continues to put breast cancer patients and at risk populations in danger of delayed diagnoses.

To increase capacity, hospitals must continue to explore efficiencies, additional safety measures, new partnership models, and new technology to ensure patients are able to receive the care they need.

Patients must also take more responsibility for their own care by learning about the risks of delayed diagnosis or treatment. Still, providers must do their part to communicate clearly with a wide and diverse audience and address patient concerns.

The COVID-19 pandemic has changed every aspect of life, but healthcare workers and developers of medical technology must continue to put patient-centered care first.

About the author

Fazila Seker, Ph.D., is passionate about women's health and social disparity issues within healthcare. She is the CEO and co-founder of MOLLI Surgical, a company that develops devices to guide precision surgeries for a better patient experience.

Fazila hosts a weekly Facebook Live show called "Breast Practices," where experts and patients discuss topics in patient-centered care. She is also a frequent author and blogger on issues in women's health.

Mental Health

Depression in early adulthood may increase risk of cognitive decline (Medical News Today: 20211007)

https://www.medicalnewstoday.com/articles/depression-in-early-adulthood-may-increase-risk-of-cognitive-decline#Living-well-is-the-best-revenge.-George-Herbert

A new study looked for links between depression and cognitive decline.

Researchers studied adults with depressive symptoms and projected their risk of developing cognitive impairment later in life.

People living with depression in early adulthood had higher odds of developing dementia.

Individuals with more severe depressive symptoms in early and late adulthood had a higher risk of developing severe cognitive decline.

According to the authors of a recent study, up to 20% of people will experience an episode of clinical depression in their lifetime.

Scientists have establishedTrusted Source that depression coexists with dementia in late life and that depression may be an early symptom of the disease.

Now, in a study published in the Journal of Alzheimer's DiseaseTrusted Source, scientists report that depression in young adulthood is associated with a 59% higher risk of developing dementia.

Medical News Today questioned the study's first author, Dr. Willa Brenowitz, a San Francisco epidemiologist, regarding the findings. She noted:

"We did find that early adulthood and late-life higher depressive symptoms were associated with late-life cognitive impairment in older adults. And that might mean early adulthood depressive symptoms [are] potential risk factors for dementia and should be investigated further."

Statistics is the grammar of science

Dr. Brenowitz, senior researcher Dr. Kristine Yaffe, and their colleagues pooled data from four large preexisting groups of participants to make a total of around 15,000 people aged 20–89 years.

The four groups are part of ongoing studies investigating risk factors for either cardiovascular disease or body composition and reduced function in older people.

Next, the researchers employed a complex statistical method called imputation. They wanted to understand whether depression in early adulthood is associated with an increased risk of dementia.

Dr. Brenowitz defined imputation as "[t]rying to make associations that would not be otherwise possible." She explained to MNT:

"Imputation is assigning missing data a value. The idea behind it is: We are missing data from these older adults on their [depressive symptoms as younger adults]. So, we are trying to assign a value to what we think their depressive symptoms were. And, to do that, we need to have data on other [young] people we think are similar: people that are exchangeable."

Comparing young and old

By comparing young people with older people with similar characteristics, the scientists could make more valid conclusions. To ensure the groups were similar, they compared similar traits, called covariates.

Dr. Brenowitz explained: “We took people that look like each other, based on certain covariates […] — the age is what is different. Also, we included other covariates, such as smoking and cardiovascular risk factors. So we created this model that fits trajectories of depression for all the participants in [the] four different studies.”

Dr. Brenowitz admits there is uncertainty in this unique model, which involves assumptions. However, these methods help scientists avoid excluding important groups of people we wish to understand better.

Brain changes in depression and dementia

Prior work suggests possible mechanisms that make people living with depression more susceptible to dementia.

Individuals with depression exhibit hyperactivity in the area of the brain that stimulates the adrenal glands to produce more glucocorticoids, such as the stress hormone cortisol. Higher cortisol levels can damage the hippocampusTrusted Source, a part of the brain that is important for cognitive function and memory.

Scientists have also identified that people living with Alzheimer’s may experience atrophy of the hippocampus. Dr. Brenowitz clarified for MNT:

“Those with depression exhibit reduced hippocampal volumes. This is thought to be due to increased stress hormones, [and] because the hippocampus is a more susceptible region to health insults […], it is also more susceptible to Alzheimer’s disease.”

She explained that the hippocampus is a “vulnerable region that might be tipped into a nonideal state, where we end up with some sort of volume loss […] that can be independent of Alzheimer’s.”

Dr. Brenowitz continued, “There could already [be] a hit from depression, and then [a person is] more likely to have Alzheimer’s disease or be more susceptible to that pathology.”

Research suggests that other mechanisms that contribute to cognitive decline may also be at work.

Depression may contribute to dementia through vascular disease, increased inflammation, depressed nerve growth factors, or increased accumulation of amyloid — a protein in the brain strongly associated with Alzheimer’s disease.

Chicken vs. egg

The researchers caution that their study estimates associations, not causation, between depression in early adulthood and late-life cognitive impairment.

Depression in early adulthood was not the only factor that increased the risk of dementia in these people. Individuals with more severe depressive symptoms in early adulthood and late life also showed a higher association with more severe cognitive decline.

Dr. Brenowitz recounted:

“In late life, it’s hard to tell the chicken and the egg: Which came first? People who develop dementia often have a trajectory of 20 years of decline, so it’s hard to pinpoint. Is this an early dementia syndrome, or is this due to other risk factors for dementia, such as vascular disease?”

‘Living well is the best revenge.’ – George Herbert

The scientists conclude that early adulthood may be a critical time to modify risk factors for dementia, such as depression. Current interventions in midlife to reduce the likelihood of developing dementia include improving cardiovascular risk and managing diabetes, which may play a roleTrusted Source in cognitive impairment.

Dr. Brenowitz acknowledged that the team’s study raises challenging questions. She noted that it remains to be seen whether aggressively addressing midlife risk factors or depressive symptoms in early adulthood will affect rates of late-life cognitive impairment.

“I feel like there is a window in early adulthood where people are starting to get past the feeling that they don’t have to do anything, and they start thinking they should live a [healthier lifestyle]. They start to build good habits that will have an impact not just on cognitive impairment, but also physical and mental health later on.”

– Dr. Willa Brenowitz